॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

ऋग्वेदीय

सरस्वतीरहस्योपनिषद्

शान्तिपाठ

ॐ वाङ् मे मनसि प्रतिष्ठिता मनो मे वाचि प्रतिष्ठितमाविरावीर्म एधि। वेदस्य म आणीस्थः श्रुतं मे मा प्रहासीः॥ अनेनाधीतेनाहोरात्रान् संदधाम्यृतं वदिष्यामि। सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु। तद्वक्तारमवतु। अवतु मामवतु वक्तारमवतु वक्तारम्॥

ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

दस बीजमन्त्रोंसे युक्त ऋग्वेदके मन्त्रोंसे सरस्वतीदेवीकी स्तुति, उसका फल; नाम-रूपके सम्बन्धसे ब्रह्मकी जगत्-स्वरूपता और समाधिका वर्णन

हरिः ॐ। कथा है कि एक समय ऋषियोंने भगवान् आश्वलायनकी विधिपूर्वक पूजा करके पूछा—"भगवन्! जिससे 'तत्' पदके अर्थभूत परमात्माका स्पष्ट बोध होता है, वह ज्ञान किस उपायसे प्राप्त हो सकता है? जिस देवताकी उपासनासे आपको तत्त्वका ज्ञान हुआ है, उसे बतलाइये।" भगवान् आश्वलायन बोले—'मुनिवरो! बीजमन्त्रसे युक्त दस ऋचाओंसहित सरस्वती-दशश्लोकीके द्वारा स्तुति और जप करके मैंने परासिद्धि प्राप्त की है।' ऋषियोंने पूछा—'उत्तम व्रतका पालन करनेवाले मुनीश्वर! किस प्रकार और किस ध्यानसे आपको सारस्वत-मन्त्रकी प्राप्ति हुई है तथा जिससे भगवती महासरस्वती प्रसन्न हुई हैं, वह उपाय बतलाइये।' तब वे प्रसिद्ध आश्वलायन मुनि बोले, 'इस श्रीसरस्वती-दशश्लोकी महामन्त्रका मैं आश्वलायन ही ऋषि हूँ, अनुष्टुप् छन्द है, श्रीवागीश्वरी देवता हैं, '**यद्वाग्**' यह बीज है, '**देवीं वाचम्**' यह शक्ति है, '**प्रणो देवी**' यह कीलक है, श्रीवागीश्वरी देवताके प्रीत्यर्थ इसका विनियोग है। श्रद्धा, मेधा, प्रज्ञा, धारणा, वाग्देवता तथा महासरस्वती—इन नाममन्त्रोंके द्वारा अङ्गन्यास किया जाता है। (जैसे, **ॐ श्रद्धायै नमो हृदयाय नमः, ॐ मेधायै नमः शिरसे स्वाहा, ॐ प्रज्ञायै नमः शिखायै वषट्, ॐ धारणायै नमः कवचाय हुम्, ॐ वाग्देवतायै नमो नेत्र-त्रयाय वौषट्, ॐ महासरस्वत्यै नमः अस्त्राय फट्।**)

ध्यान

हिम, मुक्ताहार, कपूर तथा चन्द्रमाकी आभाके समान शुभ्र कान्तिवाली, कल्याण प्रदान करनेवाली, सुवर्णसदृश पीत चम्पक-पुष्पोंकी मालासे विभूषित, उठे हुए सुपुष्ट कुचकुम्भोंसे मनोहर अङ्गवाली वाणी अर्थात् सरस्वतीदेवीको मैं, विभूति (अष्टविध ऐश्वर्य एवं निःश्रेयस)-के लिये, मन और वाणीद्वारा नमस्कार करता हूँ।

'**ॐ प्र णो देवी**' इस मन्त्रके भरद्वाज ऋषि हैं, गायत्री छन्द है, श्रीसरस्वती देवता हैं। **ॐ नमः**—यह बीज, शक्ति और कीलक तीनों है। इष्ट अर्थकी सिद्धिके लिये इसका विनियोग है। मन्त्रके द्वारा अङ्गन्यास होता है।

'वस्तुतः वेदान्त-शास्त्रका अर्थभूत ब्रह्मतत्त्व ही एकमात्र जिनका स्वरूप है और जो नाना प्रकारके नाम-रूपोंमें व्यक्त हो रही हैं, वे सरस्वतीदेवी मेरी रक्षा करें।'

ॐ प्र णो देवी सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती धीनामवित्र्यवतु॥ १॥

ॐ—दानसे शोभा पानेवाली, अन्नसे सम्पन्न तथा स्तुति करनेवाले उपासकोंकी रक्षा करनेवाली सरस्वतीदेवी हमें अन्नसे सुरक्षित करें (अर्थात् हमें अधिक अन्न प्रदान करें)॥ १॥

'**आ नो दिवः०**' इस मन्त्रके अत्रि ऋषि हैं, त्रिष्टुप् छन्द है, सरस्वती देवता हैं, **ह्रीं**—यह बीज, शक्ति और कीलक तीनों है। अभीष्ट प्रयोजनकी सिद्धिके लिये इसका विनियोग है। इसी मन्त्रके द्वारा अङ्गन्यास करे।

'अङ्गों और उपाङ्गोंके सहित चारों वेदोंमें जिन एक ही देवताका स्तुति-गान होता है, जो ब्रह्मकी अद्वैतशक्ति हैं, वे सरस्वतीदेवी हमारी रक्षा करें।'

'ह्रीं' आ नो दिवो बृहतः पर्वतादा
सरस्वती यजता गन्तु यज्ञम्।
हवं देवी जुजुषाणा घृताची
शग्मां नो वाचमुशती शृणोतु॥ २॥

ह्रीं—हमलोगोंके द्वारा यष्टव्य सरस्वतीदेवी प्रकाशमय

द्युलोकसे उतरकर महान् पर्वताकार मेघोंके बीचमें होती हुई हमारे यज्ञमें आगमन करें। हमारी स्तुतिसे प्रसन्न होकर वे देवी स्वेच्छापूर्वक हमारे सम्पूर्ण सुखकर स्तोत्रोंको सुनें॥ २॥

'**पावका नः**' इस मन्त्रके मधुच्छन्दा ऋषि हैं, गायत्री छन्द है, सरस्वती देवता हैं; '**श्रीं**' यह बीज, शक्ति और कीलक तीनों है। इष्टार्थसिद्धिके लिये इस मन्त्रका विनियोग है। मन्त्रके द्वारा ही अङ्गन्यास करे।

'जो वस्तुतः वर्ण, पद, वाक्य—तथा इनके अर्थोंके रूपमें सर्वत्र व्याप्त हैं; जिनका आदि और अन्त नहीं है, जो अनन्त स्वरूपवाली हैं, वे सरस्वतीदेवी मेरी रक्षा करें।'

'श्रीं' पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती।
यज्ञं वष्टु धिया वसुः॥ ३॥

श्रीं—जो सबको पवित्र करनेवाली, अन्नसे सम्पन्न तथा कर्मोंद्वारा प्राप्त होनेवाली धनकी उपलब्धिमें कारण हैं, वे सरस्वतीदेवी हमारे यज्ञमें पधारनेकी कामना करें (अर्थात् यज्ञमें पधारकर उसे पूर्ण करनेमें सहायक बनें)॥ ३॥

'**चोदयित्री०**' इस मन्त्रके मधुच्छन्दा ऋषि हैं, गायत्री छन्द है, सरस्वती देवता हैं। '**ब्लूं**'—यह बीज, शक्ति और कीलक तीनों है; अभीष्ट अर्थकी सिद्धिके लिये विनियोग है। मन्त्रके द्वारा ही न्यास करे।

'जो अध्यात्म और अधिदैवरूपा हैं तथा जो देवताओंकी सम्यक् ईश्वरी अर्थात् प्रेरणात्मिका शक्ति हैं, जो हमारे भीतर मध्यमा वाणीके रूपमें स्थित हैं, वे सरस्वतीदेवी मेरी रक्षा करें।'

'ब्लूं' चोदयित्री सूनृतानां चेतन्ती सुमतीनां यज्ञं दधे
सरस्वती॥ ४॥

ब्लूं—जो प्रिय एवं सत्य वचन बोलनेके लिये प्रेरणा देनेवाली तथा उत्तम बुद्धिवाले क्रियापरायण पुरुषोंको उनका कर्तव्य सुझाती हुई सचेत करनेवाली हैं, उन सरस्वतीदेवीने इस यज्ञको धारण किया है॥ ४॥

'**महो अर्णः**'—इस मन्त्रके मधुच्छन्दा ऋषि हैं, गायत्री छन्द है, सरस्वती देवता हैं, '**सौः**'—यह बीज, शक्ति और कीलक तीनों है। मन्त्रके द्वारा न्यास करे।

'जो अन्तर्यामीरूपसे समस्त त्रिलोकीका नियन्त्रण करती हैं, जो रुद्र-आदित्य आदि देवताओंके रूपमें स्थित हैं, वे सरस्वतीदेवी हमारी रक्षा करें।'

'सौः' महो अर्णः सरस्वती प्रचेतयति केतुना। धियो
विश्वा विराजति॥ ५॥

सौः—(इस मन्त्रमें नदीरूपा सरस्वतीका स्तवन किया गया है) नदीरूपमें प्रकट हुई सरस्वतीदेवी अपने प्रवाहरूप कर्मके द्वारा अपनी अगाध जलराशिका परिचय देती हैं और ये ही अपने देवतारूपसे सब प्रकारकी कर्तव्यविषयक बुद्धिको उद्दीप्त (जाग्रत्) करती हैं॥ ५॥

'**चत्वारि वाक्०**'—इस मन्त्रके उचथ्यपुत्र दीर्घतमा ऋषि हैं, त्रिष्टुप् छन्द है, सरस्वती देवता हैं, **ऐं**—यह बीज, शक्ति और कीलक तीनों है। (इष्टसिद्धिके लिये विनियोग है।) मन्त्रके द्वारा न्यास करे।

'जो अन्तर्दृष्टिवाले प्राणियोंके लिये नाना प्रकारके रूपोंमें व्यक्त होकर अनुभूत हो रही हैं। जो सर्वत्र एकमात्र ज्ञप्ति—बोधरूपसे व्याप्त हैं, वे सरस्वतीदेवी मेरी रक्षा करें।'

'ऐं' चत्वारि वाक् परिमिता पदानि
तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः।
गुहा त्रीणि निहिता नेङ्गयन्ति
तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति॥ ६॥

'**ऐं**'—वाणीके चार पद हैं अर्थात् समस्त वाणी चार भागोंमें विभक्त हैं—परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी। इन सबको मनीषी—विद्वान् ब्राह्मण जानते हैं। इनमेंसे तीन—परा, पश्यन्ती और मध्यमा तो हृदयगुहामें स्थित हैं; अतः वे बाहर प्रकट नहीं होतीं। परंतु जो चौथी वाणी बैखरी है, उसे ही मनुष्य बोलते हैं। (इस प्रकार यहाँ वाणीरूपमें सरस्वतीदेवीकी स्तुति है)॥ ६॥

'**यद्वाग्वदन्ति०**' इस मन्त्रके भार्गव ऋषि हैं, त्रिष्टुप् छन्द है, सरस्वती देवता हैं। **क्लीं**—यह बीज, शक्ति और कीलक तीनों है। मन्त्रके द्वारा न्यास करे।

'जो नाम-जाति आदि भेदोंसे अष्टधा विकल्पित हो रही हैं तथा साथ ही निर्विकल्पस्वरूपमें भी व्यक्त हो रही हैं, वे सरस्वतीदेवी मेरी रक्षा करें।'

'क्लीं' यद् वाग्वदन्त्यविचेतनानि
राष्ट्री देवानां निषसाद मन्द्रा।
चतस्र ऊर्जं दुदुहे पयांसि
क्व स्विदस्याः परमं जगाम॥ ७॥

क्लीं—राष्ट्री अर्थात् दिव्यभावको प्रकाशित करनेवाली तथा देवताओंको आनन्दमग्न कर देनेवाली देवी वाणी जिस समय अज्ञानियोंको ज्ञान देती हुई यज्ञमें आसीन (विराजमान) होती हैं, उस समय वे चारों दिशाओंके लिये अन्न और जलका दोहन करती हैं। इन मध्यमा वाक्में जो श्रेष्ठ है, वह कहाँ जाता है॥ ७॥

'**देवीं वाचं**' इस मन्त्रके भार्गव ऋषि हैं, त्रिष्टुप्

छन्द है, सरस्वती देवता हैं; '**सौः**'—यह बीज, शक्ति और कीलक तीनों है। मन्त्रके द्वारा न्यास करे।

'व्यक्त और अव्यक्त वाणीवाले देवादि समस्त प्राणी जिनका उच्चारण करते हैं, जो सब अभीष्ट वस्तुओंको दुग्धके रूपमें प्रदान करनेवाली कामधेनु हैं, वे सरस्वतीदेवी मेरी रक्षा करें।'

'सौः' देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां
विश्वरूपाः पशवो वदन्ति।
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना
धेनुर्वागस्यानुप सुष्टुतैतु॥ ८॥

सौः—प्राणरूप देवोंने जिस प्रकाशमान वैखरी वाणीको उत्पन्न किया, उसको अनेक प्रकारके प्राणी बोलते हैं। वे कामधेनुतुल्य आनन्ददायक तथा अन्न और बल देनेवाली वाग्रूपिणी भगवती उत्तम स्तुतियोंसे सन्तुष्ट होकर हमारे समीप आयें॥ ८॥

'**उत त्वः०**' इस मन्त्रके बृहस्पति ऋषि हैं, त्रिष्टुप् छन्द है, सरस्वती देवता हैं; '**सं**'—यह बीज, शक्ति और कीलक तीनों है। (विनियोग पूर्ववत् है) मन्त्रके द्वारा न्यास करे।

'जिनको ब्रह्मविद्यारूपसे जानकर योगी सारे बन्धनोंको नष्ट कर डालते और पूर्ण मार्गके द्वारा परम पदको प्राप्त होते हैं, वे सरस्वतीदेवी मेरी रक्षा करें।'

'सं' उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाच-
मुत त्वः शृण्वन्न शृणोत्येनाम्।
उतो त्वस्मै तन्वं विसस्त्रे
जायेव पत्य उशती सुवासाः॥ ९॥

सं—कोई-कोई वाणीको देखते हुए भी नहीं देखता (समझकर भी नहीं समझ पाता), कोई इन्हें सुनकर भी नहीं सुन पाता; किंतु किसी-किसीके लिये तो ये वाग्देवी अपने स्वरूपको उसी प्रकार प्रकट कर देती हैं, जैसे पतिकी कामना करनेवाली सुन्दर वस्त्रोंसे सुशोभित भार्या अपनेको पतिके समक्ष अनावृतरूपमें उपस्थित करती है॥ ९॥

अम्बितमे—इस मन्त्रके गृत्समद ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द है, सरस्वती देवता हैं; **ऐं**—यह बीज, शक्ति और कीलक तीनों है। मन्त्रके द्वारा न्यास करे।

'ब्रह्मज्ञानीलोग इस नाम-रुपात्मक अखिल प्रपञ्चको जिनमें आविष्टकर पुनः उनका ध्यान करते हैं, वे एकमात्र ब्रह्मस्वरूपा सरस्वतीदेवी मेरी रक्षा करें।'

'ऐं' अम्बितमे नदीतमे देवितमे सरस्वति।
अप्रशस्ता इव स्मसि प्रशस्तिमम्ब नस्कृधि॥ १०॥

ऐं—(परम कल्याणमयी)—माताओंमें सर्वश्रेष्ठ, नदियोंमें सर्वश्रेष्ठ तथा देवियोंमें सर्वश्रेष्ठ हे सरस्वती- देवी! धनाभावके कारण हम अप्रशस्त (निन्दित)-से हो रहे हैं, मा! हमें प्रशस्ति (धन-समृद्धि) प्रदान करो॥ १०॥

जो ब्रह्माजीके मुखरूपी कमलोंके वनमें विचरनेवाली राजहंसी हैं, वे सब ओरसे श्वेतकान्तिवाली सरस्वतीदेवी हमारे मनरूपी मानसमें नित्य विहार करें। हे काश्मीरपुरमें निवास करनेवाली शारदादेवी! तुम्हें नमस्कार है। मैं नित्य तुम्हारी प्रार्थना करता हूँ। मुझे विद्या (ज्ञान) प्रदान करो। अपने चार हाथोंमें अक्षसूत्र, अङ्कुश, पाश और पुस्तक धारण करनेवाली तथा मुक्ताहारसे सुशोभित सरस्वतीदेवी मेरी वाणीमें सदा निवास करें। शङ्खके समान सुन्दर कण्ठ एवं सुन्दर लाल ओठोंवाली, सब प्रकारके भूषणोंसे विभूषिता महासरस्वतीदेवी मेरी जिह्वाके अग्रभागमें सुखपूर्वक विराजमान हों। जो ब्रह्माजीकी प्रियतमा सरस्वतीदेवी श्रद्धा, धारणा और मेधा-स्वरूपा हैं, वे भक्तोंके जिह्वाग्रमें निवासकर शम-दमादि गुणोंको प्रदान करती हैं। जिनके केश-पाश चन्द्रकलासे अलङ्कृत हैं तथा जो भव-संतापको शमन करनेवाली सुधा-नदी हैं, उन सरस्वतीरूपा भवानीको मैं नमस्कार करता हूँ। जिसको कवित्व, निर्भयता, भोग और मुक्तिकी इच्छा हो, वह इन दस मन्त्रोंके द्वारा सरस्वतीदेवीकी भक्तिपूर्वक अर्चना करके स्तुति करे। भक्ति और श्रद्धापूर्वक सरस्वतीदेवीकी विधिपूर्वक अर्चना करके नित्य स्तवन करनेवाले भक्तको छः महीनेके भीतर ही उनकी कृपाकी प्रतीति हो जाती है। तदनन्तर उसके मुखसे अनुपम अप्रमेय गद्य-पद्यात्मक शब्दोंके रूपमें ललित अक्षरोंवाली वाणी स्वयमेव निकलने लगती है। प्रायः सरस्वतीका भक्त कवि बिना दूसरोंसे सुने हुए ही ग्रन्थोंके अभिप्रायको समझ लेता है। ब्राह्मणो! इस प्रकारका निश्चय सरस्वतीदेवीने अपने श्रीमुखसे ही प्रकट किया था। ब्रह्माके द्वारा ही मैंने सनातनी आत्मविद्याको प्राप्त किया और सत्-चित्-आनन्दरूपसे मुझे नित्य ब्रह्मत्व प्राप्त है॥ १—११॥

तदनन्तर सत्त्व, रज और तम—इन तीनों गुणोंके साम्यसे प्रकृतिकी सृष्टि हुई। दर्पणमें प्रतिबिम्बके समान प्रकृतिमें पड़ी चेतनकी छाया ही सत्यवत् प्रतीत होती है। उस चेतनकी छायासे प्रकृति तीन प्रकारकी प्रतीत होती है; प्रकृतिके द्वारा अवच्छिन्न होनेके कारण ही तुम्हें जीवत्व

प्राप्त हुआ है। शुद्ध सत्त्वप्रधाना प्रकृति माया कहलाती है। उस शुद्ध सत्त्वप्रधाना मायामें प्रतिबिम्बित चेतन ही अज (ब्रह्मा) कहा गया है। वह माया सर्वज्ञ ईश्वरकी अपने अधीन रहनेवाली उपाधि है। मायाको वशमें रखना, एक (अद्वितीय) होना और सर्वज्ञत्व—ये उन ईश्वरके लक्षण हैं। सात्त्विक, समष्टिरूप तथा सब लोकोंके साक्षी होनेके कारण वे ईश्वर जगत्‌की सृष्टि करने, न करने तथा अन्यथा करनेमें समर्थ हैं। इस प्रकार सर्वज्ञत्व आदि गुणोंसे युक्त वह चेतन ईश्वर कहलाता है। मायाकी दो शक्तियाँ हैं—विक्षेप और आवरण। विक्षेपशक्ति लिङ्ग-शरीरसे लेकर ब्रह्माण्डतकके जगत्‌की सृष्टि करती है। दूसरी आवरणशक्ति है, जो भीतर द्रष्टा और दृश्यके भेदको तथा बाहर ब्रह्म और सृष्टिके भेदको आवृत करती है। वही संसार-बन्धनका कारण है, साक्षीको वह अपने सामने लिङ्गशरीरसे युक्त प्रतीत होती है। कारणरूपा प्रकृतिमें चेतनकी छायाका समावेश होनेसे व्यावहारिक जगत्‌में कार्य करनेवाला जीव प्रकट होता है। उसका यह जीवत्व आरोपवश साक्षीमें भी आभासित होता है। आवरणशक्तिके नष्ट होनेपर भेदकी स्पष्ट प्रतीति होने लगती है (इससे चेतनका जडमें आत्मभाव नहीं रहता, अतः) जीवत्व चला जाता है तथा जो शक्ति सृष्टि और ब्रह्मके भेदको आवृत करके स्थित होती है, उसके वशीभूत हुआ ब्रह्म विकारको प्राप्त हुआ-सा भासित होता है; वहाँ भी आवरणके नष्ट होनेपर ब्रह्म और सृष्टिका भेद स्पष्टरूपसे प्रतीत होने लगता है। उन दोनोंमेंसे सृष्टिमें ही विकारकी स्थिति होती है, ब्रह्ममें नहीं। अस्ति (है), भाति (प्रतीत होता है), प्रिय (आनन्दमय), रूप और नाम—ये पाँच अंश हैं। इनमें अस्ति, भाति और प्रिय—ये तीनों ब्रह्मके स्वरूप हैं तथा नाम और रूप—ये दोनों जगत्‌के स्वरूप हैं। इन दोनों—नाम-रूपोंके सम्बन्धसे ही सच्चिदानन्द परब्रह्म जगत्-रूप बनता है॥ १२—२४॥

साधकको हृदयमें अथवा बाहर सर्वदा समाधि-साधन करना चाहिये। हृदयमें दो प्रकारकी समाधि होती है—सविकल्प और निर्विकल्प। सविकल्प समाधि भी दो प्रकारकी होती है—एक दृश्यानुविद्ध और दूसरी शब्दानुविद्ध। चित्तमें उत्पन्न होनेवाले कामादि विकार दृश्य हैं तथा चेतन आत्मा उनका साक्षी है—इस प्रकार ध्यान करना चाहिये। यह दृश्यानुविद्ध सविकल्प समाधि है। मैं असङ्ग, सच्चिदानन्द, स्वयम्प्रकाश, अद्वैतस्वरूप हूँ—इस प्रकारकी सविकल्प समाधि शब्दानुविद्ध कहलाती है। आत्मानुभूति-रसके आवेशवश दृश्य और शब्दादिकी उपेक्षा करनेवाले साधकके हृदयमें निर्विकल्प समाधि होती है। उस समय योगीकी स्थिति वायुशून्य प्रदेशमें रखे हुए दीपककी भाँति अविचल होती है। यह हृदयमें होनेवाली निर्विकल्प और सविकल्प समाधि है। इसी तरह बाह्यदेशमें भी जिस-किसी वस्तुको लक्ष्य करके चित्त एकाग्र हो जाता है, उसमें समाधि लग जाती है। पहली समाधि द्रष्टा और दृश्यके विवेकसे होती है; दूसरी प्रकारकी समाधि वह है, जिसमें प्रत्येक वस्तुसे उसके नाम और रूपको पृथक् करके उसके अधिष्ठानभूत चेतनका चिन्तन होता है और तीसरी समाधि पूर्ववत् है, जिसमें सर्वत्र व्यापक चैतन्य-रसानुभूतिजनित आवेशसे स्तब्धता छा जाती है। इन छः प्रकारकी समाधियोंके साधनमें ही निरन्तर अपना समय व्यतीत करे। देहाभिमानके नष्ट हो जाने और परमात्म-ज्ञान होनेपर जहाँ-जहाँ मन जाता है, वहीं-वहीं परम अमृतत्वका अनुभव होता है। हृदयकी गाँठें खुल जाती हैं, सारे संशय नष्ट हो जाते हैं, उस निष्कल और सकल ब्रह्मका साक्षात्कार होनेपर विद्वान् पुरुषके समस्त कर्म क्षीण हो जाते हैं। 'मुझमें जीवत्व और ईश्वरत्व कल्पित हैं, वास्तविक नहीं' इस प्रकार जो जानता है, वह मुक्त है—इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है॥ २५—३३॥

॥ ऋग्वेदीय सरस्वतीरहस्योपनिषद् समाप्त॥

शान्तिपाठ

ॐ वाङ् मे मनसि प्रतिष्ठिता मनो मे वाचि प्रतिष्ठितमाविरावीर्म एधि।
वेदस्य म आणीस्थः श्रुतं मे मा प्रहासीः॥
अनेनाधीतेनाहोरात्रान् संदधाम्यृतं वदिष्यामि। सत्यं वदिष्यामि।
तन्मामवतु। तद्वक्तारमवतु। अवतु मामवतु वक्तारमवतु वक्तारम्॥
ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!